

DAILY CURRENT AFFAIRS

IN HINDI

SPECIAL FOR UPSC & GPSC EXAMINATION

DATE : 07-10-25



The Hindu Important News Articles & Editorial For UPSC CSE

Tuesday, 07 Oct, 2025

Edition : International Table of Contents

Page 06 Syllabus : GS 3 : Science and Technology / Prelims	प्रस्तावित परमाणु विधेयक पर विचार-विमर्श जारी
Page 07 Syllabus : GS 2 : Governance and I.R. / Prelims	'वैश्विक दक्षिण के वैज्ञानिक मिलकर विचार-विमर्श और काम करके लालफीताशाही से बच सकते हैं'
Page 08 Syllabus : GS 3 : Science and technology / Prelims	नियंत्रण में: नोबेल पुरस्कार विजेताओं के काम ने प्रतिरक्षा प्रणाली को ही पुनर्परिभाषित किया है
Page 09 Syllabus : GS 2 : Social Justice / Prelims	भारत में निष्क्रिय इच्छामृत्यु में सुधार
Page 09 Syllabus : GS 2 : Social Justice / Prelims	असम, राजस्थान और केरल में बच्चों के खिलाफ अपराध बढ़े
Page 08 : Editorial Analysis Syllabus : GS 2 : Indian Polity	भारतीय न्यायपालिका की आलोचना की निंदा

भारत सरकार एक नया परमाणु विधेयक (Nuclear Bill) लाने पर विचार कर रही है, जिसके तहत Atomic Energy Act, 1962 और Civil Liability for Nuclear Damage Act, 2010 में संशोधन किया जाएगा ताकि निजी और विदेशी कंपनियों को भारत में परमाणु ऊर्जा संयंत्रों का निर्माण व संचालन करने की अनुमति मिल सके। यह कदम भारत की पारंपरिक नीति — जिसमें केवल सार्वजनिक क्षेत्र (PSUs) को परमाणु संयंत्र चलाने का अधिकार है — से एक बड़ा बदलाव होगा।

Deliberations continue on proposed nuclear Bill

Questions on private sector's role, radioactive waste disposal yet to be settled; Finance Minister said in Feb. that govt. intends to amend Atomic Energy Act, Civil Liability for Nuclear Damage Act

Jacob Koshy
NEW DELHI

Deliberations within the government continue on bringing in new legislation to allow the private sector to operate nuclear plants in India with questions regarding management of nuclear waste and determining if private players can conduct core research into nuclear technologies still being ironed out.

Drafts of the proposed new Bill were still being deliberated upon by an inter-governmental committee of experts as well as the Law Ministry though there was a "good chance" of it being introduced in the forthcoming Winter Session of Parliament, an official privy to the proceedings told *The Hindu* on condition of anonymity.

Currently, only Nuclear Power Corporation of India Ltd. (NPCIL), Bhartiya Nabhiya Vidyut Nigam Ltd. (BHAVINI), and NPCIL-NTPC joint venture Anushakti Vidyut Nigam Limited (ASHVINI) can build and operate nuclear power plants in the country.

In February, however,



Nuclear reforms: Currently, only three PSUs can build and operate nuclear power plants in the country. FILE PHOTO

Finance Minister Nirmala Sitharaman said in her Budget speech that the government intended to amend two Acts – the Atomic Energy Act and the Civil Liability for Nuclear Damage Act – to enable private companies, including foreign companies, to form partnerships, and build and operate nuclear plants in India.

Despite the India-U.S. nuclear deal of 2008 formally allowing sale of nuclear technologies to India, though with built-in periodic checks and scrutiny by the International Atomic Energy Agency, clauses in India's Atomic Energy Act and the Civil Liability for Nuclear Damage Act

(2010) have been impediments since they impose practically unlimited liability on foreign suppliers of nuclear equipment in case of an accident.

Alignment of laws

"The effort is to align India's laws on liability with that of conventions such as the Convention on Supplementary Compensation for Nuclear Damage (CSC)," the official noted. "However, we also have to bring clarity on questions such as who will be responsible, whether it is the private sector or the government power plant operators, for safe disposal of nuclear waste as well as the re-processing of spent nuclear

fuel. There is also discussion on enabling research and development of core nuclear technologies."

The government's thrust to encourage greater private sector participation is with the larger objective of installing 100 GW of nuclear capacity by 2047. This is premised not only on importing foreign reactors but also developing Bharat Small Reactors (BSRs) and exploring partnerships with the private sector. BSRs are 220 MW Pressurized Heavy Water Reactors (PHWRs). These reactors are being upgraded to reduce land requirements, making them suitable for deployment near industries such as steel, aluminium, and metals units, serving as captive power plants to aid in decarbonisation efforts.

The plan involves private entities providing land, cooling water, and capital, while the NPCIL handles design, quality assurance, and operation and maintenance. This initiative aligns with India's commitment to achieving 500 GW of non-fossil fuel-based energy generation and meeting 50% of requirements from renewable energy by 2030.

Static Context

(क) वर्तमान कानूनी ढांचा

- Atomic Energy Act, 1962: यह अधिनियम परमाणु ऊर्जा से संबंधित सभी गतिविधियों — जैसे अनुसंधान, खनन, उत्पादन और संयंत्र संचालन — को केंद्र सरकार के अधीन रखता है।
- Civil Liability for Nuclear Damage Act, 2010 (CLNDA): परमाणु दुर्घटना की स्थिति में मुआवजे का प्रावधान करता है।
 - संचालक (Operator) की जिम्मेदारी पूर्ण और विशिष्ट (exclusive) होती है।

- धारा 17(ख) के तहत ऑपरेटर को आपूर्तिकर्ता से वसूली (recourse) का अधिकार है — यही विदेशी कंपनियों के निवेश में बाधा रही है।

(ख) संस्थागत व्यवस्था

वर्तमान में केवल तीन सार्वजनिक उपक्रम (PSUs) परमाणु संयंत्र संचालित कर सकते हैं —

1. NPCIL (Nuclear Power Corporation of India Ltd.)
2. BHAVINI (Bharatiya Nabhikiya Vidyut Nigam Ltd.)
3. ASHVINI (NPCIL-NTPC का संयुक्त उपक्रम)

(ग) अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

भारत Convention on Supplementary Compensation for Nuclear Damage (CSC) का सदस्य है, जिसका उद्देश्य वैश्विक स्तर पर समान दायित्व व्यवस्था (liability regime) बनाना है।

Current Context

- वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने अपने 2024-25 के बजट भाषण में घोषणा की थी कि सरकार Atomic Energy Act और CLNDA में संशोधन कर निजी एवं विदेशी साझेदारियों की अनुमति देगी।
- **लक्ष्य:**
 - वर्ष 2047 तक 100 GW परमाणु क्षमता विकसित करना।
 - Bharat Small Reactors (BSR) को बढ़ावा देना।
 - निजी क्षेत्र को भूमि, जल स्रोत और पूंजी उपलब्ध कराने में शामिल करना।
- वर्तमान में एक अंतर-मंत्रालयी समिति (inter-ministerial committee) इस विधेयक के प्रारूप पर विचार कर रही है और इसे शीतकालीन सत्र में संसद में लाने की संभावना है।
- **प्रमुख बहस के मुद्दे —**
 - परमाणु अपशिष्ट (radioactive waste) के सुरक्षित निपटान की जिम्मेदारी किसकी होगी?
 - क्या निजी कंपनियों को मूल परमाणु अनुसंधान (core R&D) की अनुमति दी जाएगी?
 - भारत के कानूनों को अंतरराष्ट्रीय मानकों से कैसे संतुलित किया जाएगा?

विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (For Mains)

(क) महत्व

1. ऊर्जा सुरक्षा: परमाणु ऊर्जा विश्वसनीय और स्वच्छ ऊर्जा स्रोत है — जो भारत की Net Zero प्रतिबद्धताओं के लिए आवश्यक है।
2. निजी निवेश व प्रौद्योगिकी: निजी भागीदारी से पूंजी, तकनीक और रोजगार में वृद्धि होगी।
3. डिकार्बोनाइजेशन (Decarbonisation): छोटे रिएक्टर (BSR) इस्पात व धातु उद्योगों के लिए स्वच्छ ऊर्जा स्रोत बन सकते हैं।
4. वैश्विक सहयोग: विदेशी कंपनियों के प्रवेश से तकनीकी हस्तांतरण की संभावना बढ़ेगी।

(ख) चुनौतियाँ

1. सुरक्षा नियमन: निजी कंपनियों द्वारा संचालन की स्थिति में AERB की भूमिका और निगरानी अत्यंत आवश्यक होगी।
2. दायित्व (Liability): निवेश आकर्षित करने और जन सुरक्षा के बीच संतुलन बनाए रखना चुनौती है।
3. अपशिष्ट प्रबंधन: दीर्घकालिक radioactive waste disposal की जिम्मेदारी को स्पष्ट करना होगा।
4. रणनीतिक संवेदनशीलता: परमाणु तकनीक राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ी है — अतः अनुसंधान पर सरकारी नियंत्रण आवश्यक रहेगा।
5. जन स्वीकृति: परमाणु दुर्घटनाओं (जैसे फुकुशिमा) के बाद लोगों का विश्वास पुनः अर्जित करना होगा।

प्रिलिम्स हेतु मुख्य बिंदु

विषय	तथ्य
Atomic Energy Act	1962; केंद्र सरकार को पूर्ण नियंत्रण देता है
CLNDA, 2010	दायित्व संचालक (Operator) पर केंद्रित
CSC	अंतरराष्ट्रीय दायित्व मानक समझौता
परमाणु संयंत्र संचालक	NPCIL, BHAVINI, ASHVINI
Bharat Small Reactors	220 MW क्षमता वाले PHWR रिएक्टर
लक्ष्य	2047 तक 100 GW परमाणु क्षमता

निष्कर्ष

प्रस्तावित परमाणु विधेयक भारत की ऊर्जा नीति में एक ऐतिहासिक परिवर्तन का संकेत है। यह राज्य-नियंत्रित व्यवस्था से एक साझेदारी आधारित (collaborative) मॉडल की ओर कदम है। हालांकि यह भारत की स्वच्छ ऊर्जा और आत्मनिर्भरता के लक्ष्यों को तेज़ी से प्राप्त करने में मदद करेगा, पर इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि सरकार सुरक्षा, दायित्व, पर्यावरणीय और रणनीतिक पहलुओं के बीच संतुलन कैसे स्थापित करती है।

UPSC Prelims Practice Question

Ques: "Civil Liability for Nuclear Damage Act, 2010" का मुख्य उद्देश्य क्या है?

- (A) परमाणु अपशिष्ट के पुनःप्रसंस्करण के लिए निजी कंपनियों को अनुमति देना
- (B) परमाणु दुर्घटना की स्थिति में क्षति हेतु दायित्व और मुआवजे का निर्धारण करना
- (C) परमाणु तकनीक के निर्यात को बढ़ावा देना
- (D) परमाणु सुरक्षा नियमन का विकेंद्रीकरण करना

Ans : b)

UPSC Mains Practice Question

Ques: भारत के लिए "Bharat Small Reactors (BSRs)" परियोजना क्यों महत्वपूर्ण मानी जा रही है? क्या निजी क्षेत्र की भागीदारी इन रिएक्टरों के विकास और ऊर्जा संक्रमण को गति दे सकती है? विवेचना कीजिए। (250 Words)

भारत, केन्या जैसे वैश्विक दक्षिण (Global South) के देशों में वैज्ञानिक अनुसंधान अक्सर लालफीताशाही, सीमित धन, और पुरानी खरीद नीतियों के कारण कठिन हो जाता है। फिर भी वैज्ञानिक रचनात्मकता और सहयोग के ज़रिए आगे बढ़ रहे हैं। केन्या की प्वानी यूनिवर्सिटी के डॉ. सैमी वाम्बुआ ने बेंगलुरु में आयोजित "स्टूडेंट कॉन्फ्रेंस ऑन कंज़र्वेशन साइंस" में कहा कि वैज्ञानिकों को नौकरशाही अड़चनों से लड़ने के लिए आपसी सहयोग, रचनात्मक सोच और संसाधनों के साझाकरण पर ध्यान देना चाहिए।

Static संदर्भ

(a) वैश्विक दक्षिण क्या है?

- यह शब्द विकासशील देशों (मुख्यतः एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका) के लिए प्रयुक्त होता है।
- इन देशों को समान चुनौतियों का सामना करना पड़ता है — जैसे संसाधनों की कमी, तकनीकी असमानता, और वैश्विक वैज्ञानिक ढाँचों में सीमित पहुँच।

(b) भारत में अनुसंधान की स्थिति

- प्रमुख संस्थाएँ: DST, DBT, CSIR, ICAR, ICMR, UGC
- समस्याएँ:
 - अनुसंधान अनुदान में देरी
 - लंबी स्वीकृति प्रक्रिया
 - "सबसे कम मूल्य" (Lowest Bidder) नीति
 - विश्वविद्यालयों में सीमित स्वायत्तता

'Global South scientists can bypass red tape by thinking, working together'

Bureaucratic delays, outdated procurement rules, and chronic underfunding are all hallmarks of doing science in India; but according to Sammy Wambua from Pwani University in Kenya, there are reasons to be optimistic and to believe creativity and solidarity can keep research ticking.

Rishika Pardikar

Bureaucratic red tape, limited funding, and expensive equipment often conspire to make scientific research in the Global South an uphill task. Yet researchers continue to find creative ways to keep going.

At a plenary lecture during the Student Conference on Conservation Science in Bengaluru in September, Sammy Wambua, a conservation genomics scientist from Pwani University in Kenya, outlined how scientists in resource-constrained settings improvise and collaborate around bureaucratic and other hurdles.

The meeting, hosted by the Indian Institute of Science, brought together early-career scientists from India and some other countries. In his talk, 'Navigating Conservation Genomics in East Africa: A Personal Journey, Practical Lessons, and a Vision for Equitable Science', Dr. Wambua sketched out the obstacles that researchers in Kenya face and offered lessons that might resonate in India, where young scientists contend with comparable challenges.

A kind of *jugaad*

Among other points, he said that the most daunting barriers aren't scientific but bureaucratic. Multiple overlapping policies, opaque approval processes, and inhibitory oral directives often leave researchers stranded, and their experiments often at dead ends.

"When you run into hindrances with anything bureaucratic and try to get an explanation, you don't get a satisfactory one," he said. "It tells you immediately that the bureaucrats are not guided by anything that is written."

The Indian experience echoes this. Wildlife biologists often wait months for permits to enter protected areas, with no updates from the forest department. Conservationist Tarsh Thekaekara, who attended Dr. Wambua's lecture, recalled how one of his permits to work with elephants was delayed for eight months until he sat in the forest department office for four days. Such experiences are part of what he called *jugaad* – the quintessentially Indian habit of developing quick fixes to navigate inefficiencies.

Even when laws formally allow exceptions, such as buying certain enzymes from a single source because only one supplier exists, oral directives can override them. In India, procurement rules often impose rigid "lowest price" norms even for highly specific reagents, rendering it difficult for labs to procure niche materials. Earlier this year, in fact, the Union Ministry of Finance eased some of these constraints by raising the direct purchase limit from ₹1 lakh to ₹2 lakh and allowing vice-chancellors to approve tenders of up to ₹200 crore. Ideally, Dr. Wambua said, government offices should function like service counters that communicate application status clearly and proactively. Researchers in both Kenya and India instead face long silences until they make time and follow up.

Collaborations as bridges

He also argued that collaboration could provide another way around such hurdles. For example, international projects typically require memoranda of



A row of DNA sequencing machines. According to accounts from researchers in government-funded institutions, Indian public universities often face protracted procurement cycles, sometimes exceeding six months. STEVE JURKOVIC (CC BY)

understanding (MoUs) that are approved by the respective governments – but which often languish in ministries for years. Instead, he said, he and his colleagues use provisional 'Frameworks of Collaboration' that allow them to begin work while formal MoUs are still being processed.

"We apply for the MoUs to be approved, and in the meantime we can get started," he said, emphasising that the approach is legal and pragmatic.

Funding shortfalls are the other major obstacle. Dr. Wambua described how his students' applications for postgraduate scholarships were repeatedly rejected. But partnerships with conservation organisations sometimes yielded both science and support. He recalled proposing coral genotyping projects with the condition that the budget be raised to cover students' fees and stipends, in effect linking building capacity to research outcomes.

In India as well, many funding delays have threatened the sustenance of both students and research projects. Reports from Centrally funded universities have admitted arrears in disbursing fellowships. Typically, the Ministry approves scholars' claims but forces them to wait for months to receive their stipends, pushing them to take on teaching work and sometimes even personal loans.

Collaborative arrangements such as agreements between Indian and foreign labs (e.g., to split research work) are often



When you run into bureaucracy and try to get an explanation, you don't get a satisfactory one. It tells you that they are not guided by anything written

SAMMY WAMBUA
Pwani University Kenya

the only way to bridge the gap in the end.

Dr. Wambua also highlighted how rapidly evolving technology makes expensive investments more risky. For instance, buying a DNA sequencing machine might cost tens of lakhs of rupees – only for the model to become obsolete within months. Instead, he said, scientists can ship samples abroad at minimal cost to be processed using state-of-the-art facilities.

"It helps to have friends in labs in different countries," he said.

"We cannot stop working because there is no money. If you have a PhD, the least you can do is think."

'Find ways to work together'

According to accounts from researchers in government-funded institutions, Indian public universities often face protracted procurement cycles, sometimes exceeding six months. Delayed delivery or non-compatibility issues further erode value and within that timeframe, the DNA sequencer may have been rendered unnecessary or irrelevant.

Underlying Dr. Wambua's overarching message was a call for more South-South collaborations. Countries in Africa and Asia face similar constraints and stand to gain by pooling resources and aligning research priorities rather than labouring alone, often to ineffectual ends.

"We should be more intentional in seeing our strengths and finding ways to work together," he said, urging scientists to reimagine collaboration beyond the traditional North-South model.

One particular indicator of this is India's record of publications in the agricultural sciences. One recent analysis by Central University of Tamil Nadu and Banaras Hindu University researchers underscored how much international collaboration shapes visibility. In 2014-2023, scientists were found to have coauthored almost 2,100 papers with institutions in the US, eliciting more than 33,000 citations. Ultimately, the analysis showed collaborations with more institutions were also more impactful.

For young researchers in India listening in Bengaluru, the parallels would have been unmistakable. Bureaucratic delays, outdated procurement rules, and chronic underfunding are all hallmarks of doing science in India. However, Dr. Wambua's account also carried a note of optimism and that creativity and solidarity can keep science alive even in the toughest environments.

Rishika Pardikar is a freelance environment reporter.
rishika.s.pardikar@gmail.com

- भारत का R&D व्यय GDP का लगभग 0.7% है, जबकि विकसित देशों में यह 2–4% तक होता है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य (समाचार से)

- मुख्य बाधाएँ: बहुस्तरीय अनुमोदन, अस्पष्ट मौखिक आदेश और पुरानी खरीद प्रणालियाँ प्रयोगशालाओं को महीनों तक रोक देती हैं।
उदाहरण: वन्यजीव अनुसंधान के परमिट में महीनों की देरी।
- हाल के सुधार: वित्त मंत्रालय (2024) ने प्रत्यक्ष खरीद सीमा ₹1 लाख से बढ़ाकर ₹2 लाख की, और कुलपति को ₹200 करोड़ तक की निविदाओं की स्वीकृति दी।
- सहयोग आधारित समाधान:
 - वैज्ञानिक 'Frameworks of Collaboration' बनाकर बिना औपचारिक MoU के भी प्रोजेक्ट शुरू करते हैं।
 - NGO और विदेशी विश्वविद्यालयों से साझेदारी कर छात्रवृत्तियों व संसाधन जुटाते हैं।
- तकनीकी दृष्टि से व्यवहारिकता:
 - महँगी मशीनें (जैसे DNA sequencer) शीघ्र अप्रासंगिक हो जाती हैं।
 - ऐसे में वैज्ञानिक साझा प्रयोगशालाओं या विदेश भेजे गए नमूनों का उपयोग करते हैं।
- दक्षिण-दक्षिण सहयोग (South–South Cooperation): डॉ. वाम्बुआ ने एशिया और अफ्रीका के बीच वैज्ञानिक सहयोग को बढ़ाने पर जोर दिया — ताकि ये देश उत्तर-दक्षिण (North–South) मॉडल पर निर्भर न रहें।

विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (Mains के लिए)

(a) महत्व

1. समानता आधारित विज्ञान: ज्ञान के उपनिवेशी ढाँचे को तोड़कर दक्षिणी देशों को सशक्त बनाना।
2. नवाचार को प्रोत्साहन: संसाधनों की कमी से जुगाड़ आधारित नवाचार विकसित होते हैं।
3. क्षमता निर्माण: साझेदारी से प्रशिक्षण, संसाधन और ज्ञान-साझाकरण को बढ़ावा मिलता है।
4. विज्ञान कूटनीति (Science Diplomacy): भारत जैसे देशों की साख और प्रभाव अंतरराष्ट्रीय मंचों पर बढ़ता है।

(b) चुनौतियाँ

- लालफीताशाही और धीमी स्वीकृति प्रक्रियाएँ
- अनुसंधान में अपर्याप्त वित्तपोषण
- कठोर खरीद नीतियाँ
- प्रतिभाशाली शोधार्थियों का विदेश पलायन
- उत्तर-प्रधान (North-centric) शोध संरचना

(c) सुधार के सुझाव

- अनुमोदन प्रक्रियाओं का डिजिटलीकरण और सरलीकरण
- विश्वविद्यालयों को अधिक स्वायत्तता और जवाबदेही
- भारत-अफ्रीका या BRICS स्तर पर शोध सहयोग
- स्थानीय विकास लक्ष्यों से जुड़ा अनुसंधान वित्त

- खुले डेटा और ओपन एक्सेस पब्लिशिंग को बढ़ावा

प्रीलिम्स हेतु तथ्य

विषय	प्रमुख बिंदु
Global South	विकासशील देश (एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका)
भारत का R&D व्यय	GDP का लगभग 0.7%
वित्त मंत्रालय सुधार	प्रत्यक्ष खरीद सीमा ₹2 लाख, VC को ₹200 करोड़ तक स्वीकृति
South-South Cooperation	विकासशील देशों के बीच सहयोग
जुगाड़ (Frugal Innovation)	सीमित संसाधनों में नवाचार

निष्कर्ष

डॉ. वाम्बुआ का संदेश यह दर्शाता है कि संसाधनों की कमी, नौकरशाही और धनाभाव के बावजूद, रचनात्मक सोच, सहयोग और एकजुटता वैज्ञानिक कार्य को जीवित रख सकती है। भारत के लिए यह अवसर है कि वह प्रशासनिक सुधारों, दक्षिण-दक्षिण साझेदारी और वैज्ञानिक स्वायत्तता के माध्यम से अपने अनुसंधान तंत्र को सशक्त बनाए। सच्ची वैज्ञानिक प्रगति तब होगी जब वैश्विक दक्षिण के देश साथ सोचेंगे, साथ काम करेंगे, और साथ आगे बढ़ेंगे।

UPSC Prelims Practice Question

Ques: निम्नलिखित में से कौन-सा कथन भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान के संदर्भ में सही है?

1. भारत में R&D पर व्यय GDP का लगभग 0.7% है।
2. भारत की अधिकांश सार्वजनिक विश्वविद्यालयों को अनुसंधान सामग्री खरीदने के लिए "Lowest Bidder" नीति का पालन करना पड़ता है।
3. वित्त मंत्रालय ने 2024 में प्रत्यक्ष खरीद सीमा ₹5 लाख तक बढ़ा दी है।

सही उत्तर चुनिए:

- (a) केवल 1 और 2
- (b) केवल 1
- (c) 1, 2 और 3
- (d) केवल 2

Ans: (a)

UPSC Mains Practice Question

Ques: भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान के समक्ष सबसे बड़ी बाधा वैज्ञानिक नहीं बल्कि प्रशासनिक है। इस कथन की विवेचना कीजिए तथा यह भी बताइए कि किस प्रकार नीतिगत सुधार और अंतरराष्ट्रीय सहयोग अनुसंधान पारिस्थितिकी को सशक्त बना सकते हैं। (150 Words)

Page 08 : GS 3 : Science and technology / Prelims

2025 का फिजियोलॉजी या मेडिसिन का नोबेल पुरस्कारप्रतिरक्षा नियंत्रण और आत्म-सहनशीलता (self-tolerance) के क्षेत्र में खोजों को मान्यता देता है। शिमोन सकागुची, मेरी ब्रंको और फ्रेड राम्सडेल ने Regulatory T-cells (Tregs) और FOXP3 ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर की भूमिका स्थापित की। इनके शोध ने प्रतिरक्षा तंत्र को साधारण ऑन/ऑफ तंत्र से गतिशील संतुलन (activation और restraint) का पारिस्थितिकी तंत्र माना जाने वाला नया दृष्टिकोण दिया।

Static Context

(क) प्रतिरक्षा तंत्र का परिचय

- T-cells: adaptive immunity के मुख्य घटक।
 - CD4⁺ हेल्पर T-cells → इम्यून प्रतिक्रिया का समन्वय।
 - CD8⁺ साइटोटॉक्सिक T-cells → संक्रमित या असामान्य कोशिकाओं को नष्ट करते हैं।
- Self-tolerance: शरीर की अपनी कोशिकाओं पर हमले को रोकना।
- पहले ज्ञात था कि थाइमस में आत्म-प्रतिक्रियाशील T-cells का विलोपन होता है (central tolerance), लेकिन यह पूरे शरीर में autoreactive T-cells की उपस्थिति को समझा नहीं सकता।

(ख) Regulatory T-Cells (Tregs)

- विशेष CD4⁺ T-cells जो autoimmunity को रोकते हैं।
- FOXP3: Treg के विकास और रखरखाव के लिए आवश्यक ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर।
- FOXP3 में उत्परिवर्तन → गंभीर multi-organ autoimmunity (जैसे scurfy mice, IPEX syndrome)।

वर्तमान संदर्भ: खोजकर्ता योगदान

1. Shimon Sakaguchi (1995):

- Peripheral CD4⁺ Tregs की खोज।
- Tregs हटाने पर ऑटोइम्यून रोग; पुनर्स्थापन → रोग की रोकथाम।

2. Mary Brunkow & Fred Ramsdell:

- FOXP3 gene की पहचान X क्रोमोसोम पर।
- FOXP3 mutation → इम्यून प्रणाली का पतन; समान परिणाम मानव IPEX रोग में।

3. वैज्ञानिक और चिकित्सीय प्रभाव:

- Autoimmune रोग: Tregs बढ़ाना/स्थिर करना।

Kept in check

The Nobel laureates' work has redefined the immune system itself

The 2025 Nobel Prize in Physiology or Medicine has recognised discoveries that transformed the scientific understanding of autoimmune regulation. Today, researchers are exploring these conditions' genetic, molecular, and environmental determinants, paving the way for early diagnoses and targeted interventions. An important chunk of this advance is owed to the work of Mary Brunkow, Fred Ramsdell, and Shimon Sakaguchi, who established the role of regulatory T-cells (Tregs) and the transcription factor FOXP3. In the 1990s, immunologists had already defined the deletion of self-reactive T-cells during maturation, yet this process could not account for the persistence of autoreactive T-cells in healthy individuals. Sakaguchi figured that an additional mechanism must operate in the periphery. In 1995, his team identified a subset of CD4⁺ T-cells that, when they were removed from mice, led to multiple autoimmune disorders, while restoring the cells prevented disease. Next, Brunkow and Ramsdell, then at Celltech Chiroscience, found that male scurfy mice developed severe multi-organ autoimmunity and died within weeks of birth. They were able to narrow the mutation to the X chromosome, identifying an insertion in the DNA that truncated a previously unknown gene. They named it FOXP3, and found that losing it led to immune collapse. Soon, clinical collaborations reported mutations in FOXP3 in boys with a lethal autoimmune disorder. These findings together established that self-tolerance rested on a molecular switch governing the differentiation and maintenance of Tregs.

Today, in autoimmune diseases, experimental treatments aim to expand or stabilise Tregs. Early clinical trials have shown that reinforcing this cell population can mitigate harmful immune activation without broad immunosuppression. In transplantation, engineered Tregs are being infused to improve graft acceptance. In cancer, researchers are exploring selective depletion or reprogramming of tumour-associated Tregs to enhance immunity without triggering autoimmunity. Beyond therapy, the conceptual shift brought on by the laureates' work has redefined the immune system: from an on/off apparatus to a dynamic ecosystem of activation and restraint. That Brunkow and Ramsdell conducted their work within industry also underscores how private sector research can yield significant discoveries. But even now, some immunologists caution against underestimating the field's incremental nature. In a testament to the broader landscape including overlapping layers of control rather than a single molecular pathway, researchers face several obstacles to translating what they know to safe, scalable therapies. Cell-based therapies' high cost has also accentuated inequities in access, creating ethical and policy challenges.

- Transplantation: इंजीनियर Tregs → graft acceptance सुधार।
- Cancer: Tumor-associated Tregs को लक्षित करना → immunity बढ़ाना।
- Private sector योगदान: Brunkow और Ramsdell ने उद्योग में शोध कर महत्वपूर्ण योगदान दिया।

विश्लेषण (UPSC Mains)

(क) महत्व

1. वैज्ञानिक सफलता: Tregs द्वारा self-tolerance का सिद्धांत स्थापित।
2. चिकित्सीय प्रभाव: Targeted therapies, immunosuppression की आवश्यकता कम।
3. नीति और नैतिक प्रश्न:
 - महंगे cell-based therapies → healthcare में असमानता।
 - सुरक्षा, विस्तार और नियमन चुनौतियाँ।

(ख) चुनौतियाँ

- सुरक्षित, सस्ती और व्यापक उपलब्ध चिकित्सा में अनुवाद।
- प्रतिरक्षा नियंत्रण की जटिलता; FOXP3 अकेला पर्याप्त नहीं।
- शैक्षणिक, औद्योगिक और नियामक सहयोग की आवश्यकता।

Prelims पॉइंट्स

विषय	मुख्य तथ्य
Tregs	Regulatory CD4 ⁺ T-cells, immune tolerance बनाए रखती हैं
FOXP3	Treg विकास के लिए आवश्यक ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर
Autoimmunity	शरीर की अपनी कोशिकाओं पर हमला करने वाले रोग
IPEX syndrome	FOXP3 mutation से मानव में होने वाला गंभीर autoimmune रोग
चिकित्सीय उपयोग	Autoimmunity, transplantation, cancer immunotherapy

निष्कर्ष

2025 का नोबेल पुरस्कार प्रतिरक्षा विज्ञान में क्रांति का प्रतीक है। Regulatory T-cells और FOXP3 की खोज ने प्रतिरक्षा तंत्र को गतिशील संतुलन के रूप में समझने का नया दृष्टिकोण दिया। ये खोजें सटीक चिकित्सा और नई थेरेपीज विकसित करने में मदद कर रही हैं, साथ ही सुरक्षा, लागत और नैतिकता से जुड़े सवाल भी उठाती हैं।

UPSC Prelims Practice Question

Ques: FOXP3 gene किसके लिए महत्वपूर्ण है?

- a) B-cell विकास
- b) Regulatory T-cell (Treg) differentiation
- c) NK-cell सक्रियण
- d) Cytokine उत्पादन

Ans : b)

UPSC Mains Practice Question

Ques: 2025 में नोबेल पुरस्कार विजेताओं के काम को ध्यान में रखते हुए बताइए कि Regulatory T-cells (Tregs) और FOXP3 का प्रतिरक्षा तंत्र में क्या महत्व है। इस खोज का चिकित्सीय और नीति निर्माण पर प्रभाव क्या है? **(150 Words)**

यू.के. की संसद द्वारा हाल ही में पारित "Terminally Ill Adults (End of Life) Bill" ने विश्वभर में मृत्यु सहायता (Euthanasia) पर एक बार फिर बहस को तेज कर दिया है। जहाँ यू.के. चिकित्सक-सहायता प्राप्त मृत्यु (Physician-assisted dying) को वैध बनाने की दिशा में बढ़ रहा है, वहीं भारत में अब भी केवल निष्क्रिय इच्छामृत्यु (Passive Euthanasia) को अनुमति प्राप्त है — जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने 2011 के अरुणा शानबाग मामले में मान्यता दी थी और 2018 के कॉमन कॉज़ बनाम भारत संघ मामले में और स्पष्ट किया।

न्यायमूर्ति के. कानन का मत है कि भारत भले ही सक्रिय इच्छामृत्यु (Active Euthanasia) के लिए तैयार न हो, लेकिन उसे अपनी निष्क्रिय इच्छामृत्यु व्यवस्था को अधिक मानवीय, व्यावहारिक और सुलभ बनाने की दिशा में सुधार करना चाहिए।

Reforming passive euthanasia in India

In June, the U.K.'s House of Commons passed the Terminally Ill Adults (End of Life) Bill, reigniting a global conversation about euthanasia. The proposed law permits physician-assisted dying for mentally competent adults expected to live fewer than six months, subject to medical certification and oversight by a national panel. While it is awaiting approval from the House of Lords, the Bill marks a bold legal and moral step that many western countries have embraced.

While India has recognised passive euthanasia through a series of Supreme Court judgments, it has consciously drawn a line against active euthanasia. Cultural values, institutional capacity, and socio-economic conditions make it unlikely that India will mirror the U.K.'s path. But that does not mean it should remain static.

Practical inaccessibility

Passive euthanasia permits the withdrawal of life-sustaining treatment when it merely prolongs suffering. It is not an act of killing but an allowance for death to take its natural course. Yet, despite legal recognition, procedural requirements, such as advance directives, dual medical board clearance, and occasional judicial oversight, make implementation painfully slow.

For patients in terminal stages or their families, these delays amount to cruelty. The law, though sound in principle, is often hollow in practice. Reports from tertiary hospitals suggest that in most cases, families are forced to make decisions informally and outside the legal framework, thus placing doctors in a difficult legal position. The absence of an efficient implementation system erodes the very dignity the law was intended to preserve.

The U.K. model, while progressive, rests on strong institutional supports such as the National Health Service, universal access to general practitioners,



K. Kannan

former judge, Punjab and Haryana High Court, and author, Medicine and Law (2025)

and a reliable regulatory framework. India's healthcare system is fragmented, uneven, and under-resourced. Moreover, its societal context — marked by deep family involvement, religious sensitivities, and varying literacy levels — makes end-of-life choices more complex. Introducing active euthanasia, even with safeguards, may inadvertently pressurise the elderly, disabled, or financially dependent to opt for death. As medical care is expensive and palliative care underdeveloped, this could produce ethical dilemmas of coercion.

There are also jurisprudential concerns. While Article 21 of the Constitution guarantees the right to life and has been interpreted to include the right to die with dignity, this cannot be stretched to mean a right to be killed. The Supreme Court has been cautious in maintaining the distinction between omission and commission, between allowing death and causing death. The Indian approach reflects a careful ethical conservatism suited to the realities of the country.

Charting its own course

Rather than expanding into active euthanasia, India should focus on refining its passive euthanasia protocol. A humane, efficient system can be built by leveraging digital tools and streamlining procedures. There is already growing consensus among medical professionals and legal scholars that the present system is too cumbersome.

Advance directives should be registered on a national digital portal, linked with Aadhaar for biometric verification. This system should allow patients to create, update, or revoke their directives easily. A treating physician should validate the patient's mental capacity and intent online.

Hospital ethics committees, consisting of senior doctors, a palliative care specialist, and a neutral third party, should be empowered to authorise withdrawal of life support within

48 hours. Exceptional cases can be flagged for further scrutiny.

Although a State-level ombudsman was initially proposed for oversight, India's experience with ombudsman schemes in banking and insurance has been mixed. Delays, limited enforcement powers, and public unfamiliarity have marred their effectiveness. Instead, a more transparent, decentralised review mechanism — perhaps built into hospital networks and monitored through digital dashboards — may be more suitable. Independent medical auditors or health commissioners with statutory backing could be alternatives worth exploring.

Mandatory safeguards, such as a seven-day cooling-off period, psychological counselling, and palliative care review, should remain part of the process to prevent misuse and ensure decisions are fully informed. These align with international best practices and help address fears of abuse, especially among vulnerable populations.

The way forward

India's constitutional promise of dignity in life must extend to dignity in dying. Reforming passive euthanasia does not require India to imitate the U.K.'s active euthanasia model, but it does compel it to make the current framework workable. Digitally driven procedures, local hospital-based ethics review, and effective (but not burdensome) oversight can make end-of-life decisions more accessible and humane. This path is consistent with Indian values, safeguards against abuse, and empowers patients without risking exploitation. In addition, medical education must integrate training on end-of-life care, including ethical and legal components. Public awareness campaigns are essential to normalise discussions on advance care planning. Without public trust and awareness, even the best laws will fail to serve their purpose.

India's constitutional promise of dignity in life must extend to dignity in dying

Static Context**(a) इच्छामृत्यु के प्रकार (Types of Euthanasia)**

प्रकार	विवरण
सक्रिय इच्छामृत्यु (Active Euthanasia)	किसी रोगी की मृत्यु को सीधे चिकित्सा हस्तक्षेप (जैसे इंजेक्शन) द्वारा लाना।
निष्क्रिय इच्छामृत्यु (Passive Euthanasia)	जीवनरक्षक उपचार को रोकना या वापस लेना ताकि रोगी की प्राकृतिक मृत्यु हो सके।

(b) भारत में कानूनी स्थिति (Legal Status in India)

- अरुणा शानबाग मामला (2011) – सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायिक निगरानी में निष्क्रिय इच्छामृत्यु की अनुमति दी।
- कॉमन कॉज़ मामला (2018) – अनुच्छेद 21 के अंतर्गत "गरिमा के साथ मृत्यु का अधिकार" को मान्यता दी और Advance Medical Directives (Living Will) को वैध किया।
- सक्रिय इच्छामृत्यु अब भी भारतीय दंड संहिता (धारा 302/304) के अंतर्गत दंडनीय है।

(c) अनुच्छेद 21 – जीवन और गरिमा का अधिकार :जीवन का अधिकार, गरिमा के साथ जीने के अधिकार को समाहित करता है — जिसे न्यायालय ने गरिमा के साथ मरने के अधिकार तक विस्तारित किया है।

वर्तमान संदर्भ (Current Context)

यू.के. का Terminally Ill Adults (End of Life) Bill, 2025 उन वयस्कों को अनुमति देता है जिनकी जीवन प्रत्याशा 6 महीने से कम है, कि वे चिकित्सक की देखरेख में assisted dying का विकल्प चुन सकें।

भारत में, यद्यपि निष्क्रिय इच्छामृत्यु कानून प्रगतिशील है, लेकिन व्यवहार में यह लगभग अप्राप्य है क्योंकि —

- जटिल प्रक्रिया (दो मेडिकल बोर्ड, न्यायिक अनुमति)
- Advance Directive को लेकर जन-जागरूकता की कमी
- डिजिटल प्रणाली और त्वरित अनुमोदन का अभाव
- नौकरशाही देरी के कारण मरीजों को अनावश्यक पीड़ा

परिणामस्वरूप, अधिकतर परिवार अनौपचारिक निर्णय लेते हैं, जिससे चिकित्सकों पर कानूनी जोखिम बढ़ जाता है।

विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (Analytical Perspective for Mains)

(a) भारत में सक्रिय इच्छामृत्यु के विरोध के कारण

- सांस्कृतिक व धार्मिक संदर्भ: परिवारिक निर्णयों में गहराई, धार्मिक मान्यताएँ और सामाजिक दृष्टिकोण।
- संस्थागत कमजोरी: स्वास्थ्य ढांचे की असमानता और Palliative Care की सीमित पहुंच।
- नैतिक जोखिम: बुजुर्गों, विकलांगों या आर्थिक रूप से निर्भर लोगों पर दबाव की संभावना।
- न्यायिक दृष्टिकोण: न्यायालय "मृत्यु को होने देना" (Omission) और "मृत्यु कराना" (Commission) में भेद मानता है।

(b) निष्क्रिय इच्छामृत्यु सुधार की दिशा (Reforming Passive Euthanasia)**1. एडवांस डायरेक्टिव का डिजिटलीकरण**

- आधार से जुड़ी राष्ट्रीय डिजिटल रजिस्ट्री बनाई जाए।
- चिकित्सक द्वारा सत्यापन सुनिश्चित किया जाए।

2. अस्पताल-आधारित नैतिक समितियाँ (Hospital Ethics Committees)

- वरिष्ठ डॉक्टरों, palliative care specialists, और स्वतंत्र सदस्यों का पैनल।
- 48 घंटे में निर्णय देने की बाध्यता।

3. सरलीकृत निगरानी तंत्र (Simplified Oversight)

- राज्य ओम्बड्समैन की जगह डिजिटल ट्रैकिंग प्रणाली।
- स्वतंत्र medical auditors को वैधानिक अधिकार।

4. सुरक्षा व समर्थन उपाय

- 7 दिन का cooling-off period, मनोवैज्ञानिक परामर्श, और पेलिएटिव समीक्षा।
- सूचित सहमति व दुरुपयोग से बचाव।

5. क्षमता निर्माण व जागरूकता

- मेडिकल शिक्षा में End-of-Life Care Ethics को शामिल किया जाए।
- जन-जागरूकता अभियानों से Living Will को सामान्य किया जाए।

प्रारंभिक परीक्षा के लिए बिंदु (Prelims Pointers)

अवधारणा	मुख्य तथ्य
अरुणा शानबाग मामला (2011)	भारत में पहली बार निष्क्रिय इच्छामृत्यु को मान्यता मिली
कॉमन कॉज़ मामला (2018)	Living Will को वैध किया गया, गरिमा के साथ मृत्यु के अधिकार को मान्यता
Active vs Passive Euthanasia	Active = मृत्यु कराना; Passive = मृत्यु होने देना
अनुच्छेद 21	गरिमा के साथ जीवन का अधिकार
धारा 309 IPC	आत्महत्या के प्रयास को अब मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 2017 के तहत अपराधमुक्त किया गया

निष्कर्ष (Conclusion)

भारत का संवैधानिक दर्शन जीवन के साथ-साथ मृत्यु में भी गरिमा की मांग करता है। पश्चिमी देशों के सक्रिय इच्छामृत्यु मॉडल को अपनाने के बजाय, भारत को अपने निष्क्रिय इच्छामृत्यु ढांचे को सुदृढ़ और मानवीय बनाना चाहिए। डिजिटल साधनों, विकेन्द्रीकृत नैतिक समितियों और सरल प्रक्रिया के माध्यम से, यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि कोई भी रोगी नौकरशाही उलझनों में फंसे बिना शांतिपूर्वक और गरिमा के साथ मृत्यु को प्राप्त कर सके — यही अनुच्छेद 21 की आत्मा का सच्चा सम्मान होगा।

UPSC Prelims Practice Question

Ques : इच्छामृत्यु (Euthanasia) के संदर्भ में निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए —

1. सक्रिय इच्छामृत्यु (Active Euthanasia) भारत में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वैध मानी गई है।
 2. Common Cause vs Union of India (2018) मामले में "Right to Die with Dignity" को अनुच्छेद 21 का अंग माना गया।
 3. Aruna Shanbaug case (2011) में निष्क्रिय इच्छामृत्यु (Passive Euthanasia) की अनुमति दी गई थी।
- सही विकल्प चुनिए:
- (A) केवल 1 और 2
- (B) केवल 2 और 3
- (C) केवल 3
- (D) 1, 2 और 3

Ans: B)

UPSC Mains Practice Question

Ques : भारत में सक्रिय इच्छामृत्यु को वैध करने के पक्ष और विपक्ष में तर्क प्रस्तुत कीजिए। (150 Words)

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) 2023 के आंकड़ों के अनुसार, असम, राजस्थान और केरल में बच्चों के खिलाफ अपराधों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जो देश में 25% औसत वृद्धि से कहीं अधिक है। हालांकि, आंकड़ों में वृद्धि का मतलब हमेशा अपराधों की वास्तविक वृद्धि नहीं होता, यह बेहतर रिपोर्टिंग, कड़ी प्रवर्तन या सटीक वर्गीकरण का संकेत भी हो सकता है।

Crimes against children surge in Assam, Rajasthan, and Kerala

A rise in the number of cases does not always mean a rise in the number of crimes; it may also indicate better reporting

DATA POINT

Devyanshi Bihani

In 2023, cases of crimes against children recorded the sharpest rise in three States – Assam, Rajasthan and Kerala, according to the latest data from the National Crime Records Bureau.

In Assam, recorded cases of crimes against children surged by nearly 100% – from an average of around 5,100 cases between 2018 and 2022 to more than 10,000 in 2023. In Kerala, the number increased by 106% – from an average of more than 2,800 cases between 2018 and 2022 to more than 5,900 cases in 2023. In Rajasthan, the number increased by 70% – from an average of 6,200 cases between 2018 and 2022 to more than 10,500 cases in 2023.

In comparison, overall recorded cases of crimes against children in India increased by 25% in that period. Map 1 shows the percentage change in cases of crimes against children in 2023 compared with the average number of cases recorded between 2018 and 2022. While these three States stand out, the reasons for the rise in each of them vary considerably.

In Assam, a record crackdown on child marriage led to a sharp rise in the number of cases filed under the Prohibition of Child Marriage Act, 2006. In fact, a close look at Assam's crime data against children shows that the spike was driven almost entirely by this State-led intervention. Between 2020 and 2022, about 150 cases were recorded annually in Assam under the Prohibition of Child Marriage Act; this increased to 5,267 in 2023. That year, cases related to child marriage accounted for nearly 52% of all crimes against children in the State, a dramatic jump from 3-4% in the preceding years, as shown in Chart 2.

In Rajasthan, two key factors appear to have driven the rise. The first is the sudden shift in the way

offences against children were categorised – from only non-POCSO sections to specific POCSO provisions. POCSO refers to the Protection of Children from Sexual Offences Act, 2012. In 2021 and 2022, over 2,700 cases were filed separately under the rape provision (Section 376 of the Indian Penal Code). However, in 2022 and 2023, no cases were filed independently under this section; instead, there was a corresponding rise in cases registered under the relevant POCSO provision. Cases filed under Sections 4 and 6 of the POCSO Act read with Section 376 of the IPC increased from just three in 2021 and 2022 to more than 3,500 in 2022 and 2023 (Chart 3). This shift – from filing cases solely under IPC provisions to invoking relevant sections of the POCSO Act – was seen across the country, but was most pronounced in Rajasthan.

It should be noted that the more accurate classification of child rape cases occurred alongside an actual increase in such offences in Rajasthan – from about 2,700 to 3,500 cases. However, whether this rise is primarily due to proper classification or an actual increase in offences is an open question.

The second is that there was a sharp spike in cases related to the kidnapping and abduction of children. In Rajasthan, cases filed under various sections related to the kidnapping and abduction of children rose sharply, with their share in total crimes against children climbing to over 54% in 2023 – a steep increase (Chart 4).

There was a surge in POCSO cases in Kerala too. The increase appears partly linked to more accurate classification of offences under specific POCSO sections, accompanied by an increase in the reported cases (Chart 5).

It is important to note that the rise in cases, particularly those involving crimes against children, may indicate improved reporting, rather than a genuine increase in the incidence of such crimes.

Three States, one trend

The data for the charts were sourced from the National Crime Records Bureau (NCRB) from 2020 to 2023

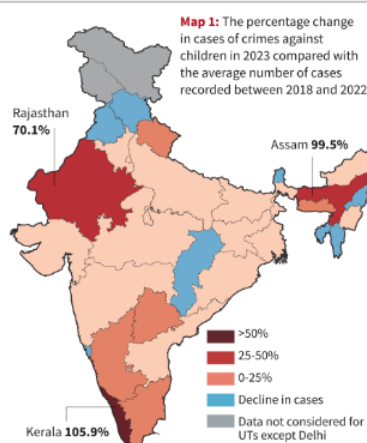
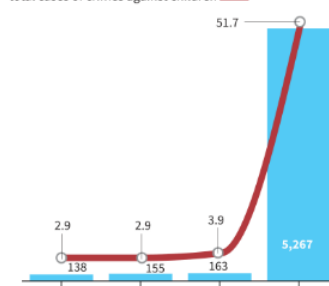


Chart 2: The number of cases registered under the Prohibition of Child Marriage Act in Assam, and its share (%) in total cases of crimes against children



It is important to note that the rise in cases, particularly those involving crimes against children, may indicate improved reporting, rather than a genuine increase in the incidence of such crimes

Devyanshi.b@thehindu.co.in

Chart 3: Cases registered under various POCSO provisions in Rajasthan, and its share (%) in total cases of crimes against children

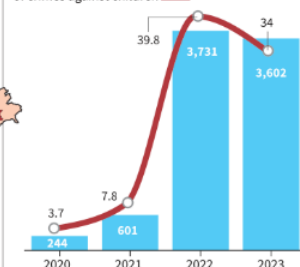


Chart 4: Cases registered under kidnapping and abduction of children in Rajasthan, and its share (%) in total cases of crimes against children

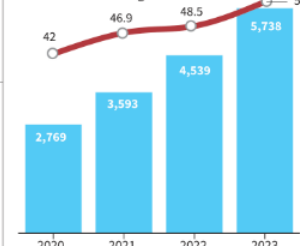
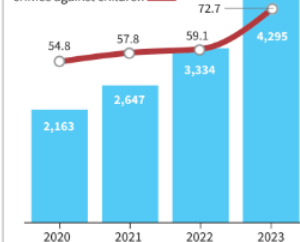


Chart 5: Cases registered under various POCSO provisions in Kerala, and its share (%) in total cases of crimes against children



Static Context

• बच्चों के संरक्षण के लिए कानून:

- POCSO एक्ट, 2012: बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों से सुरक्षा; अनिवार्य रिपोर्टिंग और बाल अनुकूल न्यायिक प्रक्रिया।
- बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006: बाल विवाह को अपराध घोषित करता है।
- आईपीसी सेक्शन 363-373: अपहरण और बाल संबंधित अपराध।

- NCRB: अपराधों का राष्ट्रीय स्तर पर सांख्यिकीय रिकॉर्ड।
- भारत में बच्चों के खिलाफ अपराध: अक्सर अधूरी रिपोर्टिंग होती है, सामाजिक कलंक, डर या जागरूकता की कमी के कारण।

वर्तमान संदर्भ (State-wise Trends)

राज्य	मुख्य कारण	टिप्पणी
असम	बाल विवाह पर कड़ी कार्रवाई	2023 में बाल विवाह से संबंधित मामले बढ़कर 5,267; बच्चों के खिलाफ कुल अपराधों का 52%। यह अपराध की वृद्धि नहीं बल्कि प्रवर्तन वृद्धि दर्शाता है।
राजस्थान	1. POCSO एक्ट के तहत मामलों का पुनर्वर्गीकरण; 2. अपहरण/किडनैपिंग में वृद्धि	POCSO मामले 2,700 से 3,500 तक; बच्चों का अपहरण 54% तक। बेहतर वर्गीकरण के साथ वास्तविक अपराध वृद्धि भी।
केरल	POCSO मामलों में वृद्धि	सटीक वर्गीकरण और बेहतर रिपोर्टिंग।

मुख्य तथ्य: रिपोर्ट किए गए मामलों में वृद्धि हमेशा अपराध की वास्तविक वृद्धि का संकेत नहीं देती।

विश्लेषण (Mains Perspective)

(a) महत्व

1. नीति और प्रवर्तन: बाल सुरक्षा कानूनों का सक्रिय कार्यान्वयन।
2. डेटा सटीकता: POCSO के तहत सटीक वर्गीकरण नीति निर्माण में सहायक।
3. जागरूकता और रिपोर्टिंग: बढ़ती जागरूकता और कानून में विश्वास।

(b) चुनौतियाँ

1. वास्तविक अपराध में वृद्धि: अपहरण और यौन अपराध।
2. प्रणालीगत अड़चनें: अपर्याप्त संरचना, लंबी कानूनी प्रक्रियाएँ।
3. सामाजिक-सांस्कृतिक कारक: कलंक के कारण कई मामले छिपाए जाते हैं।

(c) सुझाव

- जिला और राज्य स्तर पर बाल संरक्षण समितियों का सशक्तीकरण।
- बाल अनुकूल न्यायिक प्रक्रिया और फास्ट ट्रैक कोर्ट।
- समुदाय में जागरूकता और रिपोर्टिंग तंत्र को बढ़ावा।
- डेटा संग्रह और अनुसंधान के आधार पर नीति निर्माण।

निष्कर्ष

असम, राजस्थान और केरल में बच्चों के खिलाफ अपराधों में वृद्धि बेहतर रिपोर्टिंग और प्रवर्तन के कारण हुई हो सकती है, साथ ही कुछ मामलों में वास्तविक वृद्धि भी। बच्चों की सुरक्षा के लिए कानूनी ढांचे, जागरूकता, और संरचनात्मक सुधार आवश्यक हैं। सटीक डेटा और समय पर हस्तक्षेप ही अपराध नियंत्रण और नीति निर्माण में प्रभावी साबित होंगे।

UPSC Prelims Practice Question

Ques: बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 का उद्देश्य क्या है?

- a) 18 वर्ष से कम आयु में विवाह पर प्रतिबंध
- b) केवल लड़कियों के विवाह को अपराध घोषित करना
- c) लड़कों और लड़कियों दोनों के विवाह को प्रतिबंधित करना
- d) विवाह पर कोई सीमा नहीं

Ans : c)

UPSC Mains Practice Question

Ques: भारत में बाल संरक्षण कानूनों और POCSO एक्ट के प्रभाव का मूल्यांकन कीजिए। इसमें सुधार के लिए क्या सुझाव दिए जा सकते हैं? (150 Words)

Treat employment as a national priority

India is the most populous and also one of the youngest countries. Estimates by the Confederation of Indian Industry (CII) suggest that over the next 25 years, India will add around 133 million people to its working-age population (15-64 years), which is close to 18% of the total incremental global workforce. However, India has a short window to leverage this demographic dividend, as the worker population is expected to peak around 2043.

Employment generation is critical for equity and inclusion. Quality jobs at scale can lift millions out of poverty, reduce regional and social disparities, and ensure a more even distribution of growth benefits. Generating jobs is also vital for growth and resilience. In a consumption-driven economy such as India's, broadening consumption through good quality jobs accelerates and stabilises growth.

Focus on long-term job creation

Employment must, therefore, be treated as a national priority. This requires consistent growth policies that encourage steady investment and long-term job creation, rather than fragmented or short-term approaches. Despite central and State governments initiatives, from skill development to social security, India still lacks a unified national framework that comprehensively addresses employment and livelihoods.

Job creation requires interventions on both demand and supply sides of the labour market. Demand is driven by economic and sectoral growth, while supply is influenced by skills, mobility and societal norms. Without bridging these gaps, policy impact will remain limited. A particular concern is the employability of graduates. College curricula need focused reviews to make graduates job ready, supplemented with skilling programmes that are aligned to industry and emerging sectors.

To address these challenges, an Integrated National Employment Policy is of urgent need. This should consolidate existing schemes and align diverse initiatives. It must be developed in coordination with States, key Ministries, and



Sanjiv Bajaj

is Past President,
Confederation of
Indian Industry (CII)



Chandrajit Banerjee

is Director-General,
Confederation of
Indian Industry

India still lacks a unified national framework that addresses the issue of employment and livelihoods

industry. Governance could be overseen by an Empowered Group of Secretaries, with implementation led by District Planning Committees that understand local challenges.

The policy must define time-bound goals, identify high-employment-potential sectors and align trade, industrial, education and labour policies to maximise job creation. It should also tackle labour market frictions, regional disparities and barriers faced by women and marginalised groups, while ensuring that skilling incorporates technologies such as Artificial Intelligence and robotics.

Another challenge is the mismatch between the availability of people and jobs. The Centre and States must work together on migration policies and support systems that promote mobility constructively, without letting politics become a barrier. Building "One India" for employment mobility will be critical.

Timely implementation of the four Labour Codes must also be prioritised and clear transition guidelines and advisory support for businesses will be essential.

Sectors to zero in on

Job creation efforts must focus on labour-intensive sectors such as textiles, tourism, agro-processing, real estate, and health care. The Micro, Small and Medium Enterprises sector, which already employs over 25 crore people, requires a comprehensive support strategy covering access to finance, technology, skilling, and markets to generate "growth with jobs". To address urban job distress, an urban employment guarantee programme could be piloted in select cities.

A major opportunity lies in the expanding gig economy, which employs between 80 lakh and 1.8 crore workers and could grow to 9 crore by 2030. With participation spreading into Tier-2 and Tier-3 cities, it holds enormous potential for job creation and formalisation. A national policy for the gig economy can help unlock this potential.

The policy should promote sector growth

while ensuring worker protection through skilling, finance and social security. A centralised registry could enable seamless onboarding, preserve work histories and reduce entry barriers. Fair contracts, safety standards and grievance redress must also be ensured. With the right institutional and regulatory support, the gig economy can become a cornerstone of India's inclusive workforce.

Beyond numbers, improving job quality through better wages, safer conditions, and social security is vital. Affordable housing near industrial hubs can improve mobility and quality of life. Regionally balanced employment can be promoted through targeted interventions in 100 most underdeveloped districts, rural internships for graduates, and remote work and BPOs in towns. Enhancing female labour force participation should be another priority. This requires incentives under the Employment-Linked Incentive (ELI) scheme, formalisation of Anganwadi and Accredited Social Health Activist roles, investment in childcare and eldercare, and campaigns to address societal norms restricting women's work.

Need for employment data

Finally, high-quality, real-time employment data is critical. A dedicated task force could strengthen methodologies, expand coverage to the informal and rural workforce, and reduce the lag between data collection and publication.

With coordinated reforms, targeted investments, and an inclusive national employment strategy, India can fundamentally transform its employment landscape. Doing so is not only essential to unlocking its demographic dividend, but also central to achieving equitable, resilient, and sustained growth.

These employment-focused measures also tie in with the broader reform agenda that CII has laid out in its recent Report on Policies for a Competitive India. Employment generation, as emphasised in this article, is an integral part of that wider vision of building a competitive India and achieving Viksit Bharat by 2047.

GS. Paper 02– Indian Polity

UPSC Mains Practice Question: भारत में न्यायपालिका पर अक्सर देरी और "विकास में बाधा" जैसी आलोचनाएँ होती हैं। आप इन आलोचनाओं का विश्लेषण कीजिए और सुधार के उपाय सुझाइए। (150 Words)

Context :

भारतीय न्यायपालिका लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। अक्सर इसे धीमी कार्यप्रणाली, देरी और विकास में बाधा डालने वाला बताया जाता है। हाल ही में, प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार परिषद के सदस्य संजीव सान्याल ने इसे “विकसित भारत बनने में सबसे बड़ी बाधा” कहा। हालांकि, विशेषज्ञ मानते हैं कि यह आलोचना असंगत और अधूरी है, जो कानून निर्माण और शासन के प्रणालीगत दोषों को अनदेखा करती है।

Static Context**(क) न्यायिक संरचना**

- संरचना: सुप्रीम कोर्ट → उच्च न्यायालय → जिला और अधीनस्थ न्यायालय
- भूमिका: संविधान की रक्षा, कानून का पालन, मौलिक अधिकारों की सुरक्षा और कार्यपालिका व विधायिका पर नियंत्रण

(ख) न्यायिक देरी के कारण

1. कानून में अस्पष्टता: उदाहरण – कॉमर्शियल कोर्ट्स एक्ट 2015, सेक्शन 12A
2. सरकारी मुकदमेबाजी: केंद्र और राज्य सरकार सबसे बड़े मुकदमाकर्ता हैं
3. अत्यधिक कार्यभार: न्यायालयों में केसों की संख्या बहुत अधिक, न्यायाधीशों की कमी

वर्तमान संदर्भ

- अक्सर न्यायपालिका को विकास में बाधा के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
- न्यायाधीश अदालत में सुनवाई के अलावा तैयारी, आदेश लेखन और केसों की समीक्षा में कई घंटे काम करते हैं।
- छुट्टियाँ केवल आराम के लिए नहीं, बल्कि रिज़र्व किए गए आदेशों को पूरा करने के लिए होती हैं।
- गलत कानून और सरकारी मुकदमेबाजी न्यायपालिका पर बोझ डालते हैं।

विश्लेषण**(क) आलोचना का स्थान**

- न्यायिक देरी कानून और प्रशासन की असंगतियों का परिणाम है, न्यायालय की नहीं।
- उदाहरण: प्री-सूट मध्यस्थता की असफलताएँ कानून की डिज़ाइन दोष हैं, न कि न्यायाधीश की गलती।

(ख) प्रणालीगत कारण

1. सरकारी मुकदमेबाजी: मंत्रालय और सार्वजनिक उपक्रम अनावश्यक मुकदमे करते हैं।
2. कानून में अस्पष्टता: पुराने कानूनों का केवल नाम बदलना नया विवाद पैदा करता है।
3. संसाधनों की कमी: न्यायालयों में स्टाफ और अवसंरचना की कमी, भारी कार्यभार

(ग) न्यायपालिका की स्वतंत्रता

- न्यायालय कार्यपालिका पर संतुलन बनाए रखने का काम करता है।
- विकास का मतलब न्यायिक स्वतंत्रता को कमजोर करना नहीं होना चाहिए।

यूपीएससी महत्वपूर्ण बिंदु

विषय	प्रमुख बिंदु
न्यायिक संरचना	सुप्रीम कोर्ट → उच्च न्यायालय → अधीनस्थ न्यायालय
सेक्शन 12A, कॉमर्शियल कोर्ट्स एक्ट	प्री-सूट मध्यस्थता अनिवार्य
देरी के मुख्य कारण	क्रानून की अस्पष्टता, सरकारी मुकदमेबाजी, संसाधनों की कमी
न्यायपालिका की स्वतंत्रता	कार्यपालिका की जाँच करने के लिए आवश्यक; केवल गति के लिए नहीं

निष्कर्ष

न्यायपालिका सुधार की आवश्यकता है – जैसे देरी कम करना, अवसंरचना सुधारना और जवाबदेही बढ़ाना। लेकिन इसे “विकास में सबसे बड़ी बाधा” कहना भ्रामक है। वास्तविक समाधान क्रानून की स्पष्टता, सरकारी जवाबदेही और संसाधनों के बेहतर प्रबंधन में है। एक स्वतंत्र और सक्षम न्यायपालिका ही लोकतंत्र और सच्चे विकास की नींव है।